फरीदाबाद
मजदूर समाचार
हर जगह, सब से, जब भी समय मिले

'मजदूर समाचार' की कुछ सामग्री अंग्रेजी में इन्टरनेट पर है। देखें–
< http://faridabad majdoorsamachar.blogspot.in >

डाक पता : मजदूर लाईब्रेरी, आटोपिन झुग्गी, एन.आई.टी. फरीदाबाद - 121001

नई सीरीज नम्बर 315 1/– सितम्बर 2014

वैसे, काफी कुछ हो रहा है

फिल्मों में ये सब आ कहाँ से रहा है ?

किसी के आगे-पीछे बहुत से बॉडीगार्ड होते हैं तो लोग हँस देते हैं। फिल्मों में नैतिक तौर पे खोखले पैसेवाले अपने साथ बहुत सारे बॉडीगार्ड ले कर चलते हैं। हीरो का काम ये होता है कि दो-ढाई घण्टे मेहनत कर के, बॉडीगार्डो को भेदते हुये इस खोखलेपन को उजागर करे। फिल्मों में तो ये साफ-साफ है कि बहुत सारे बॉडीगार्ड लिये व्यक्ति खोखले होते हैं। कभी-कभी नायक बॉडीगार्ड की भूमिका में भी आते हैं, और एक नैतिक द्वन्द्व से गुजर कर उल्टा वार करके ही हीरो बनते हैं। इसे देख कर लोग खुश होते हैं, ताली बजाते हैं, परिवार को ले जा कर साथ में देखते हैं, बार-बार देखते हैं, पैसे खर्च करके देखते हैं, घर पे देखते हैं। मानसिक और नैतिक तौर पर व्यक्ति जितना कमजोर, उतने ही अधिक बॉडीगार्ड के घेरों की आवश्यकता। किसी की ये कमजोरी किन कारणों से है ?

बहुत पढाई-लिखाई करने, सुसंस्कृत बनने के बाद, दैनिक जीवन मे अपने आप को झूठ-फरेब के जाल में क्यों बाँधता है कोई?

अच्छे-मँहगे स्कूल में पढे, कॉलेज डिग्री ली, ट्रैकिंग की, गाना सीखा, नाटकों में भाग लिया, वाद-विवाद में हिस्सा लिया, खेल प्रतिस्पर्धाओं में भाग लिया, पिकनिक मनाई, रात-भर गाने-नाचने की क्षमता रखी, साहित्य पढा, विश्व की बेहतरीन फिल्में देखी, कला दीर्घाओं में गये, कला पे चर्चायें की, दर्शनशास्त्र पढा, फिलोसफरों पे चर्चायें की, समाज सेवा की। तब एम बी ए की, एक बेहतरीन जीवन की राह मानते हुये मैनेजर बने। और इतना कुछ के बाद कार्यस्थल पर पाते हैं कि मैनेजर लोग दैनिक जीवन में झूठ, पाखण्ड, धूर्तता, फरेब, दुर्व्यवहार और डर के ताने-बाने में लिपटे हैं। उनकी पूरी मानसिक एकाग्रता अपने आसपास के जीवन को सिकोड़ने में लग जाती है। एक सफल मैनेजर अपने साथ कितने बॉडीगार्ड रखता है?

विश्वविद्यालय का उप कुलपति अपनी ही यूनिवर्सिटी को निकम्मे, नालायक पैदा करने वाला संस्थान क्यों बोल बैठा?

दिल्ली विश्वविद्यालय, केन्द्रीय विश्वविद्यालय है, जो कि विश्व में एक जानी-मानी यूनिवर्सिटी है। उसके वाइस चान्सलर ने कहा कि यह संस्थान हजारों की सँख्या में हर वर्ष निकम्मे, नालायक डिग्री वाले पैदा कर रहा है। चलिये मान लेते हैं कि बहुत शोध और गम्भीर चिन्तन-मनन की उपज है उप कुलपति का ये बयान। और इधर दिल्ली विश्वविद्यालय, अम्बेडकर विश्वविद्यालय, जामिया, जे.एन.यू. के छात्र बोल रहे हैं कि हम मजदूर बन गये हैं, इसलिये पढने के लिये विश्वविद्यालय छात्रों को तनखा दे। ऐसी पढाई हम पैसे दे कर तो नहीं करेंगे। हम कोई गारन्टी भी नहीं देंगे कि आगे जा कर हम मजदूरी-प्रथा में खुद को खपायेंगे, मैनेजर या मजदूर बन कर। लगता है कि उप कुलपति के बयान और छात्रों की बातों – दोनों में– सच्चाई है। क्या इस द्वन्द्व का समाधान बड़ी सँख्या में बॉडीगार्ड रखने से हो जायेगा ?

सम्पादक और प्रतिष्ठित बुद्धिजीवी अपने सिकुड़े दायरों के पार क्यों नहीं देख पाते ?

कुछ पत्रकारों से बातचीत में ये उभरा कि आजकल दिल्ली के इर्द-गिर्द की इन्डस्ट्रीयल बैल्ट की गतिविधियों, हलचलों, विस्फोटों की वजह से पत्रकारों के बीच काफी उत्तेजना और प्रेरणा उत्पन्न हुये हैं। वे विश्वास से भरपूर हो अपने सम्पादकों के सामने बात रखते जा रहे हैं कि ज्यादा से ज्यादा इस सब की रिपोर्टिंग की जाये। सम्पादक कुछ हद तक हाँ कह देते हैं और फिर काट-छाँट कर छोटे-मोटे रूप में कुछ सामग्री छाप देते हैं। सम्पादक लोग रिपोर्टरों द्वारा जुटाई सामग्री को यूनियनों की भाषा में समेटने की कोशिशें करते हैं। पत्रकारों को दिखता है कि फैक्ट्रियों में काम करते 90 प्रतिशत मजदूर अपनी पहलकदमी से, बिना किन्हीं नुमाइन्दों के, बिना किन्हीं नेताओं के निरंतर कदम उठा रहे हैं। लेकिन सम्पादकों के पास ये समझने के लिये कोई फ्रेम-चौखट नहीं है। सम्पादकों के सलाहकार प्रतिष्ठित बुद्धिजीवियों की भी यही सीमा रेखायें हैं। अपनी विद्या, अपनी सोच, अपनी सीमाओं के मोह और घमण्ड में जकड़े हुये हैं ये। भ्रम में लिपटे ऐसे लोगों को इतिहास की धुँध में लुप्त होने से कोई बॉडीगार्ड बचा सकता है क्या ?

न्याय के पाठ पढते-पढाते ऊटपटाँग हरकतों में कैसे बदल जाते हैं ?

हाल ही में "द हिन्दू" अखबार में एक पत्रकार ने मारुति सुजुकी मानेसर फैक्ट्री के मजदूर, जो राजनैतिक कैदी हैं, उनके बारे में पुलिस ने जो आरोप-पत्र दायर किये हैं, उनको थोड़ा गौर से पढा। उन्होंने जो पाया उस पर सहज रूप से रिपोर्ट लिखी। रिपोर्ट बहुत ही जल्दी चारों तरफ फैल गई – फेसबुक, ट्विटर, ब्लॉगों, ई-मेल के जरिये। उसमें ऐसी क्या चीज थी जो इतनी प्रसारण क्षमता लिये हुये थी ? तीन ठेकेदार कम्पनियों के मुखिया पुलिस-कम्पनी-सरकार की तरफ से गवाह हैं। केवल ये तीन ही चश्मदीद गवाह हैं। उन तीनों के बीच राजनैतिक कैदी मजदूर वर्णमाला की A-B-C-D के अनुसार बाँटे गये हैं। यानी, पहले गवाह ने उन वरकरों को देखा जिनके नाम A से G तक के अक्षरों से शुरू होते हैं। दूसरे गवाह ने G से P तक के, और तीसरे गवाह ने P से S तक के मजदूरों को देखा। गुड़गाँव (दक्षिण) के डीसीपी ने पत्रकार के प्रश्न के उत्तर में कहा, "यह मुमकिन बहुत कम है, पर असम्भव नहीं है।" कितना ऊटपटाँग जुमला है।

हमारे सामने खड़ी घमण्डी सत्ता-शक्ति का प्रदर्शन दरअसल नैतिक, बौद्धिक, भौतिक और मानसिक रूपों में खोखला तथा लड़खड़ाता हुआ नहीं है क्या ?■

मजदूर लाइब्रेरी, आटोपिन झुग्गी, एन. आई. टी. फरीदाबाद – 121001 (यह जगह बाटा चौक और मुजेसर के बीच गंदे नाले की बगल में है।)

नाकारा हुआ, लड़खड़ाता कानून का राज

नई रचना की वेला है, सामाजिक मन्थन नित नई तीव्रता और गहराई प्राप्त कर रहा है। रुपये-पैसे, मण्डी-मुद्रा, ऊँच-नीच का यह अन्तिम चरण है। यह स्वागत-योग्य स्थिति है। रुपये-पैसे को जीवन की धुरी बनाये रखने के लिये विधान-संविधान हैं। कम्पनियाँ और सरकारें जीवन को रुपये-पैसे से बाँधने-जकड़ने के औजार हैं। नियम-कानून कम्पनियों और सरकारों के सुरक्षा कवच हैं। ये बात बिलकुल साफ है कि आज कानूनों का उल्लंघन सामान्य बन गया है, कानूनों का पालन अपवाद बन गया है।

मुंजाल किरयु मजदूर : ''प्लॉट 192 सैक्टर-4, आई.एम.टी. मानेसर स्थित फैक्ट्री में 1000 मजदूर ***मारुति सुजुकी, होण्डा, टोयोटा, निसान, जनरल मोटर, ह्युन्दई*** कारों के ब्रेक डिस्क और ब्रेक ड्रम बनाते हैं। कहने को तीन शिफ्ट हैं — सुबह 6 से 2, दोपहर 2 से 10, रात 10 से अगली सुबह 6 बजे तक पर तीन ठेकेदार कम्पनियों के जरिये रखे 400 मजदूरों की सुबह 6 से साँय 6 और साँय 6 से अगली सुबह 6 बजे की दो शिफ्ट हैं। कम्पनी रोल पर जो नये हैं, जो बिना जैक वाले हैं, उनकी भी 12-12 घण्टे की शिफ्ट हैं। जबरन रोकना, 24 घण्टे तक रोकना। ओवर टाइम का भुगतान दुगुनी दर की बजाय सिंगल रेट से। जबरन रोकने, कम वेतन, ई.एस.आई. कार्ड, पी.एफ. नम्बर, ठेकेदारों के जरिये रखे मजदूरों को कम्पनी के परमानेन्ट वरकर बनाने, कैन्टीन में भोजन, सुरक्षा उपकरण, डाँटने आदि-आदि पर मजदूर कई बार उत्पादन ठप्प कर चुके हैं। मजदूरों के दबाव की वजह से तीन महीने पहले 200 मजदूरों को कम्पनी रोल पर किया, कैन्टीन में कुछ सुधार हुआ, परमानेन्ट करने पर तनखा 7000 रुपये करते थे जिसे चार महीने से 12,000 रुपये कर दिया है। हर महीने 1000 मजदूरों की तनखा से ई.एस.आई. तथा पी.एफ. की राशि काटते हैं पर एक भी मजदूर को ई.एस.आई. का कच्चा-पक्का कार्ड नहीं दिया है, एक भी मजदूर को पी.एफ. नम्बर नहीं बताया है। जो मजदूर निकाले, जो मजदूर नौकरी छोड़ गये उन्हें फण्ड के पैसे नहीं मिले। कम्पनी के शेयरों में 67 प्रतिशत किरयु कम्पनी के हैं और 33 प्रतिशत मुंजाल समूह के। मैनेजिंग डायरेक्टर मुंजाल समूह का है। जापान से 5 लोग मेन्टेनैन्स में हैं, प्रोब्लम रहती ही हैं, इसलिये वे काम में लगे रहते हैं। जापान से आया एक व्यक्ति अकाउन्ट और डिजाइन में है। कैन्टीन और बसों के खर्च का आधा मजदूर देते हैं और आधा कम्पनी। यहाँ फाउण्ड्री 2003 से और मशीनिंग 2007 से हैं। फाउण्ड्री शॉप में तापमान बहुत ऊँचा रहता है, सुरक्षा का कोई प्रबन्ध नहीं — जूते जल्दी ही फट जाते हैं पर 6 महीने से पहले बदलते नहीं, 20-25 किलो वजन लगातार उठाना पड़ता है, पसीने-पसीने रहते हैं, चाय-भोजन का कुछ निश्चित नहीं, चालू काम खत्म करने पर चाय-रोटी। प्रोडक्शन टारगेट है, डाँट-फटकार बहुत, निर्धारित उत्पादन पूरा करने पर ही छुट्टी।''

सेबरोस ऑटो श्रमिक : ''प्लॉट181 सैक्टर-5, आई.एम.टी. मानेसर स्थित फैक्ट्री में जुलाई की तनखा 11 अगस्त को दे रहे थे तब एक डाई के एक पार्ट टूटने के बदले में दो सुपरवाइजरों के 8-8 हजार रुपये काटे। फिर प्रेशर डाईकास्टिंग मजदूरों के 3-3 हजार काटने लगे तो मजदूरों ने पैसे नहीं लिये और विभाग के मजदूरों ने 9 मशीनें बन्द कर दी। तनखा बाँटने वाला एच आर हैड है। मशीनें बन्द हुये एक घण्टा हो गया तब बिना कोई पैसे काटे तनखा दी और फिर मशीनें चालू हुई। फैक्ट्री में 12-12 घण्टे की दो शिफ्ट हैं, तीसों दिन, 15 अगस्त को भी फैक्ट्री चली। ओवर टाइम का भुगतान सिंगल रेट से। एक-दो शायद परमानेन्ट हों, बाकी सब 150 मजदूर तीन ठेकेदारों के जरिये रखे हैं। तनखा से ई.एस.आई. तथा पी.एफ. की राशि काटते हैं, कम काटते हैं। मजदूर काम करते रहते हैं पर हर तीन महीने में कागजों में ब्रेक दिखाते हैं। साल पीछे 3 महीने का ही ई.एस.आई. तथा पी.एफ. जमा करते हैं। फैक्ट्री में ज्यादा काम ***मारुति सुजुकी*** का और कुछ ***होण्डा, हीरो*** दुपहियों का। रात में झपकी लेते देख लेते हैं तो मैनेजमेन्ट 12 घण्टे के पैसे काट लेती है। सेबरोस मजदूरों में चर्चा : गार्डों तथा स्टाफ की पिटाई करना ठीक रहेगा या फिर कुछ और करना बेहतर होगा ?''

ट्रैक कम्पोनेन्ट्स वरकर : '' प्लॉट 21 सैक्टर-7, आई.एम.टी. मानेसर स्थित फैक्ट्री में 17 फरवरी को नेत्र बहादुर सुबह 7 से साँय 7 की शिफ्ट में काम कर रहा था। करीब सवा छह बजे डाई क्लैम्प नहीं होने के कारण 160 टन की पावर प्रेस पर डाई ब्लॉक सीधा नेत्र बहादुर के चेहरे पर लगा। सब दाँत गये, जबड़ा तहस-नहस, अगस्त में भी मेडीकल छुट्टी पर। कम्पनी ने एक्सीडेन्ट रिपोर्ट नहीं भरी, रोड़ एक्सीडेन्ट में घायल दिखाया, कहा कि 5½ छूट कर घर जा रहा था तब सड़क पर एक्सीडेन्ट हुआ। प्रेस शॉप के सब मजदूरों ने 19 फरवरी को काम बन्द किया और नेत्र बहादुर को मुआवजा तथा स्थाई नौकरी के लिये कहा। डेढ घण्टे काम बन्द रहा, एच आर से साहब आ कर बोला कि सुपरवाइजरों और इंजीनियरों को कम्पनी ठेकेदारों के जरिये रख रही है तो वरकर को कैसे परमानेन्ट करेंगे, इलाज होने दो फिर देखेंगे। ट्रैक कम्पनी की पुणे, बंगलुरू आदि में भी फैक्ट्रियाँ हैं और यहाँ मानेसर में काम करते 1000 मजदूरों में 8-9 ही परमानेन्ट हैं। जनवरी व जुलाई 2013 में सरकार द्वारा घोषित मँहगाई भत्ता कम्पनी ने नहीं दिया, जनवरी 2014 वाला डी.ए. भी नहीं दिया। मजदूरों में आपस में बातचीतें बढी और 17 अप्रैल को तीनों मंजिलों के मजदूर काम बन्द कर नीचे एकत्र हुये। डेढ घण्टे काम बन्द और एच आर वालों से डी.ए. देने तथा ओवर टाइम का भुगतान दुगुनी दर से करने को कहा। तब वे बोले थे कि अप्रैल की पेमेन्ट देंगे तब 2013 तथा 2014 के डी.ए. के पैसे इकट्ठे दे देंगे और ओवर टाइम का मई में बता देंगे। पैसे पुरानी रेट से ही दिये तो 12 मई को टी-ब्रेक में 3½ बजे तीनों फ्लोर के सब वरकर एकत्र हो गये। एच आर वाले साफ मना कर गये और धमकी भी दे गये। अगले दिन 3½ बजे टी-ब्रेक में प्रोडक्शन मैनेजर बोला कि काम बन्द मत करो, एच आर में बात करूँगा, प्लान्ट हैड से मिलूँगा, चेयरमैन-मैनेजिंग डायरेक्टर से बात करूँगा, महीना-बीस दिन लगेंगे, सब हो जायेगा। इन्तजार में जून भी निकलने लगा। मजदूरों में अन्दर ही आपस में बातचीत हुई कि 30 जून तक ओवर टाइम डबल रेट से नहीं देंगे तो 1 जुलाई से ओवर टाइम नहीं करेंगे। पहली जुलाई को तीनों मंजिलों के दोनों शिफ्टों के मजदूरों ने 8 घण्टे ड्युटी बाद छुट्टी कर ली। दस जुलाई तक कम्पनी अधिकारी कुछ नहीं बोले। फिर 11 जुलाई को नोटिस लगाया। इनकार और धमकी के बाद भी कोई मजदूर ओवर टाइम के लिये नहीं रुका। तब 13 जुलाई से फैक्ट्री में 8-8 घण्टे की तीन शिफ्ट शुरू की और सख्ती बढाने के संग-संग प्रेजेन्टी के 300 रुपये बढा कर 1500 कर दिये। सब स्थाई मजदूरों का मई में गेट रोक दिया था और वे श्रम विभाग गये तो कम्पनी ने उन्हें बंगलुरू फैक्ट्री ट्रान्सफर दिखाया। तारीख पड़ रही हैं और वे रोज सुबह फैक्ट्री गेट पर आते हैं। सख्ती के फेर में कई लड़कों के गेट रोके हैं और वे भी 8-9 स्थाई मजदूरों के साथ बैठने लगे हैं। सुबह हर रोज दो-तीन घण्टे 50-60 वरकर फैक्ट्री गेट पर बैठते हैं। यहाँ ***मारुति सुजुकी, बी एम डब्लू, होण्डा, महिन्द्रा*** कारों और ***सुजुकी, होण्डा, हीरो, यामाहा*** दुपहियों के हिस्से-पुर्जे बनते हैं।''

सात-आठ वर्ष टी वी चैनलों में काम कर चुके एक साथी की बातें

मीडिया और मजदूर

समाज में मीडिया की एक अहम भूमिका बनती है। समाज जैसे-जैसे बड़ा और जटिल होता जाता है वैसे-वैसे हमारे एक-दूसरे से सम्बन्ध कमजोर होने लगते हैं। ऐसे में हम एक-दूसरे को कैसे जानें, कैसे समझें? मीडिया के जरिये हम अपनी बात आगे रख सकते हैं, दूसरों की सुन सकते हैं और अपने तजुर्बों को साझा कर सकते हैं। चर्चा-बहस भी कर सकते हैं और किस तरह का समाज बनाना है उसकी एक साथ कल्पना कर सकते हैं।

वैसे तो मीडिया को आपकी और हमारी बातों को जगह देनी चाहिए पर आमतौर पर ऐसा नहीं होता। हमारी बातों, हमारे मुद्दों को बड़े टी वी चैनल और अखबार हमेशा ही नजरअंदाज करते रहे हैं। ऐसा क्यों होता है समझना मुश्किल नहीं है। मीडिया भी कार, मोटरसाइकिल, कपड़े, जूते बनाने वाले उद्योगों की तरह एक उद्योग है जहाँ पर खबरों का उत्पादन होता है। जो खबर बिकती है वही बनती है। बाजारीकरण से मीडिया अछूता नहीं है।

मीडिया में मजदूर

मीडिया उद्योग विज्ञापनों के जोर पर चलता है। बड़ी-छोटी कम्पनियाँ आपके और हमारे बनाये हुये सामान को बेचने के लिये मीडिया विज्ञापनों पर हर साल करोड़ों-अरबों रुपये खर्च करती हैं। टी वी चैनलों और अखबारों को विज्ञापन देने वाली कम्पनियों के मन मुताबिक खबरों को जगह देनी पड़ती है। ऐसा न समझें की यह उनकी मजबूरी है। पर ऐसा जरूर कह सकते हैं की उन्हें ऐसा करने में कोई गुरेज नहीं है। मामला धँधे का जो है।

खरीद-बेच की होड़ को सुचारू रूप से चलाने के लिये जरूरी है की दर्शकों और पाठकों को कोई ऐसी चीज न दिखाई या बताई जाये जो उन्हें आज की व्यवस्था पर सोचने या सवाल उठाने का मौका दे। अगर आपको मालूम हो की जिस चीज को आप खरीदना चाहते हैं उसके बनने में कितना खून, पसीना, गाली-गलौज, लाठी-गोली लगती हैं तो क्या आप उस चीज को खरीदेंगे ?

तेजी से बढती बाजीरीकरण की प्रक्रिया मीडिया के दम पर ही चलती है। सब सही है, सब कुछ ठीक है, सब खुश हैं, हमेशा यही दिखाने या बताने की कोशिश रहती है। अगर कोई जरूरी मुद्दा उठाया भी जाता है तो उसे एक अपवाद की तरह पेश किया जाता है। मामला कितना व्यापक या गंभीर है यह छुपाया जाता है। इतना तोड़-मरोड़ दिया जाता है कि अत्याचारी तो शोषित और शोषित खुद अत्याचारी सा दिखता है।

मारुति सुजुकी मजदूर संघर्ष की ही बात को लें तो मीडिया के अनुसार मजदूरों ने देश की छवि पर दाग लगाया है और तरक्की की राह में रोड़ा अटकाया है। दूसरी ओर मैनेजमेन्ट का गुणगान, की जैसे-तैसे करके वह देश का परचम ऊँचा लहरा रही है। मारुति सुजुकी के 147 मजदूर दो साल से जेल में हैं। उन के लिए खबरों में जगह नहीं है। जगह है तो मारुति सुजुकी के चेयरमैन के लिए जिन्हें प्रधान मन्त्री अपने साथ हाल ही के जापान दौरे पर ले गये।

इसी बात का दूसरा पहलू यह है कि आज के दौर में मीडिया भी शासन तंत्र का एक अहम हिस्सा बन गया है। हाल ही में हुए लोक सभा चुनावों में एक अंदाजे से सभी राजनीतिक पार्टियों ने मिला कर 30 हजार करोड़ रुपये प्रचार में खर्च किये। जाहिर है इस में से ज्यादातर पैसा कम्पनियों से आया। सोचने वाली बात है कि नेता और मंत्रीगण इन पैसों की अदायगी कैसे करेंगे ?

मीडिया के मजदूर

मीडिया को एक उद्योग के तौर पर दूसरे नजरिए से भी देखना बनता है। हर उद्योग की तरह यह भी मजदूरों की ताकत और मेहनत से चलता है। और यहाँ भी हालात किसी और उद्योग से अलग नहीं हैं। काम करते-करते दिन रात में और रात, दिन में बदल जाते हैं। मोबाइल फोन और ई-मेल की बदौलत मीडिया कर्मी हमेशा काम पर रहते हैं। अगर फोन या ई-मेल का जवाब न दें तो आसमान टूट पड़ता है। जल्दी-जल्दी काम करने का इतना बोझ रहता है कि ठीक से नींद भी नहीं आती। 24-25 साल के लड़के-लड़कियाँ गंभीर स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं से जूझते रहते हैं। कभी डिप्रेशन, कभी मानसिक तनाव के कारण चर्म-रोग, कभी स्ट्रोक, दौरा।

कैमरापर्सन, एडीटर, ड्राइवर, और हाउसकीपिंग स्टाफ की भी यही स्थिति है। बोलो की तबियत खराब है तो सुनने को मिलता है की गोली खा कर काम पर आ जाओ। 24 घण्टे की ड्युटी आम बात है। कहीं दूर रिपोर्टिंग करने जाओ तो कहा जाता है की आने-जाने पर इतना खर्चा कर रहें हैं, सिर्फ एक रिपोर्ट से काम नहीं चलेगा, दो-तीन कर के ही वापस आना।

पत्रकारों को प्रोडक्शन टारगेट पूरे करने पड़ते हैं। मैनेजर हिसाब रखते हैं की किसने कितनी रिपोर्ट पूरी की। टारगेट से कम काम करने पर डाँट-फटकार या तनखा में कटौती। इन्टरनेट के आने के बाद अब टी वी और अखबार के अलावा कम्पनी वेबसाइट के लिए भी काम करना पड़ता है। फेसबुक और ट्विटर जैसे सोशल मीडिया साइट्स पर भी अपनी और कम्पनी की साख बनाने के लिए पोस्ट करने पड़ते हैं। अपने मन को मारना पड़ता है। जिस तरह की रिपोर्टिंग आप करना चाहते हैं उसका मौका नहीं मिलता। हमेशा यह बताया जाता है कि आदर्शवादी नहीं मौकापरस्त बनो। अपने करियर की सोचो।

नौकरी जाने का डर हमेशा बना रहता है। कई जगह ऐसा भी हुआ है कि अचानक एक शाम फोन पर ही कह दिया जाता है की कल से काम पर आने की जरूरत नहीं है। ऐसी शाम अपना फोन उठाने से भी डरने लगते हैं। इस डर के चलते कोई क्या बेबाक रिपोर्टिंग करेगी-करेगा ?

ऑफिस में एक-दूसरे पर चीखना-चिल्लाना आम बात है। अगर किसी के ऊपर सीनियर चिल्लाते हैं तो वह अपनी झुँझलाहट अपने जूनियर्स पर निकालते हैं। सिलसिला चलता रहता है। पर इस खराब माहौल के बावजूद दोस्तियाँ पनपती हैं और मौज-मस्ती के लिये वक्त निकाल ही लिया जाता है। यारी-दोस्ती में कुछ अपनी मन-मर्जी का अच्छा काम भी हो जाता है।

बहुत सारे साथी अभी भी कम्पनी और नौकरी की चौहद्दी में संघर्ष कर रहे हैं। लेकिन कुछ साथी अब मीडिया उद्योग छोड़ कर अपना खुद का काम शुरू कर रहे हैं। वह कहानियाँ कह रहे हैं जिनको कहने की जरूरत है। रास्ते कई हैं, तरीके कई हैं।

मजदूरों का मीडिया ?

पर क्या हमें इंतजार या उम्मीद करनी चाहिये की कोई और कहीं से आकर हमारी कहानियाँ कहेगा ? हम अपनी बात खुद अपने बीच या दुनिया के सामने क्यों नहीं रख सकते ? आज हमारे पास पहले से कहीं ज्यादा जरिये हैं। मोबाइल फोन और इन्टरनेट ने आज यह काम बहुत हद तक आसान कर दिया है। कैमरा फोन से वीडियो बनान, फोटो खींचना, अपनी बातों को रिकार्ड करना, व्हाट्सएप्प ग्रुप पर मैसेज, फोटो और वीडियो भेजना..... हम इतना कुछ बनाते हैं तो अपना मीडिया क्यों नहीं ?

खुद आजमा कर देखें ?

कुछ टी वी चैनलों और अखबारों के नम्बर दे रहे हैं। खुद बात कर के भी देखें की क्या वह आपकी कहानियों में दिलचस्पी रखते हैं......

सीएनएन/ आईबीएन-7 : 0120-4341818, 0120-3987777
एनडी टीवी 24X7/ एनडी टीवी इंडिया : 011-26446666
टाइम्स नाव : 022-24999944
हेडलाइंस टुडे/आज तक : 0120-4807100
टाइम्स ऑफ इंडिया : 011-23302367, 011-23492172
हिन्दुस्तान टाइम्स/हिन्दुस्तान : 011-23361234, 011-60004242
द हिन्दू : 044-28576300
जनसत्ता : 011-23702141
इंडियन एक्सप्रेस : 011-23702100-07

थोड़ा और हँसने-हँसाने के लिये

इण्डो ब्रिटिश गारमेन्ट्स मजदूरों से बातचीत

इण्डो ब्रिटिश गारमेन्ट्स मजदूर : ''पैन्ट का एक पैर बत्तीस इन्च का और दूसरा पैर चौंतीस इन्च का। एक्सपोर्ट की बत्तीस हजार पैन्ट रिजैक्ट हो कर वापस आ गई। मार्च में एक दिन गोलाई लिये बड़ी वी.आई.पी. टेबल के चारों तरफ 52 स्त्री-पुरुष चैकर तथा 4 क्यू ए कुर्सियों पर बैठाये और लाइन सुपरवाइजर, फ्लोर इन्चार्ज, क्वालिटी मैनेजर, जनरल मैनेजर, गुड़गाँव में कारपोरेट ऑफिस से आये लोग खड़े हुये। यहाँ के एक डायरेक्टर के साथ कलकत्ता से डायरेक्टर विलेन वाली फिल्मी स्टाइल में आया। बैठे हुओं से एक-एक करके परिचय लिया — नाम, क्या चैक करते हैं, किस लाइन में हैं। यहाँ का डायरेक्टर फिनिशिंग से फाइनल पास 8-9 शर्ट पैक किये हुये लाया था। कलकत्ता के डायरेक्टर ने हर कमीज को खोल कर दिखलाया। कहीं दाग, कहीं सिलाई खुली हुई, कहीं सिलाई चौड़ी अथवा पतली। सब शर्ट फेल थे। आप लोग क्या चैक करते हैं? सारा माल वापस आ रहा है। 32,000 पैन्ट वापस आ गई हैं। बहुत शर्म की बात है। इससे बढिया फैक्ट्री दुनिया में कहीं देखी नहीं। चीन गया, अमरीका गया (कई देशों के नाम लिये) लेकिन आप जैसे बेशर्मों को नहीं देखा। उसके पास ऑफिस से निकाला रिकार्ड था। हम आपको क्यों रखें? कम्पनी घाटे में जा रही है। क्या फैक्ट्री बन्द कर दें? सब वरकर चुप रहे। इसका मतलब है कि एक्सपोर्ट लाइन में काम करने के आप लायक नहीं हैं। फिर वह डायरेक्टर बोला कि सिर नीचे करो और उँगली अपनी तरफ करके जोर से बोलो कि हम चोर हैं..... उस समय मुझे फिल्म दीवार का सीन याद आया जिसमें अमिताभ बच्चन के हाथ पर माफिया ने लिख दिया था, ''मेरा बाप चोर है।''

''कम्पनी ने क्वालिटी मैनेजर को नौकरी से निकाल दिया। बस। कटिंग, सिलाई, फिनिशिंग, चैकिंग, री-चैकिंग, फाइनल चैकिंग, पैकिंग में भी चैक होता है। एक पैन्ट 60-70 हाथों से हो कर गुजरती है। इन 32,000 पैन्टों को बनाने में स्टाफ के 100 लोग और 800 मजदूर शामिल थे।

''फरीदाबाद में डी एल एफ इन्डस्ट्रीयल एस्टेट से यह फैक्ट्री वर्ष-भर पहले प्लॉट 23 सैक्टर-24 आई है। इण्डो ब्रिटिश गारमेन्ट्स ***ग्रुप4*** समूह की कम्पनी है और कुछ समय पहले तक यहाँ ग्रुप 4 गार्डों की वर्दियों की ही सिलाई होती थी। इन वर्दियों को दुनिया-भर में भेजा जाता है। ग्रुप 4 गार्डों की वर्दियाँ तैयार करने के लिये 7-8 अन्य देशों में भी फैक्ट्रियाँ हैं और फरीदाबाद फैक्ट्री से मजदूर वहाँ भी भेजे गये हैं। यहाँ कार्यरत 800 मजदूरों में तीन-चौथाई महिला मजदूर हैं। जो 32,000 पैन्टें कहीं से ग्रुप 4 गार्डों से वापस आई उन्हें इधर अगस्त में 6-6, 8-8, 10-10 करके स्त्री हो चाहे पुरुष मजदूर हो, कम्पनी ने बाँटी हैं। एक पैर 32 इन्च का और दूसरा पैर 34 इन्च का वाली पैन्टें थोक में कम्पनी ने स्टाफ को दी हैं। ग्रुप 4 गार्डों के 13,000 जैकेट भी थोक में रिजेक्ट हो कर वापस आये हैं। स्त्री-पुरुष मजदूरों को 1-1, 2-2 करके कम्पनी ने जैकेट देने शुरू कर दिये हैं, प्रति मजदूर 5-6 जैकेट देने की बात है, अभी बोरे खोलने हैं।

''इण्डो ब्रिटिश गारमेन्ट्स फैक्ट्री में ठेकेदार नहीं हैं। सब मजदूर कम्पनी स्वयं भर्ती करती है। ई.एस.आई. तथा पी.एफ. हैं। ओवर टाइम का भुगतान दुगुनी दर से। कैन्टीन में थाली 10 रुपये में। तनखा 7 तारीख से पहले। सुबह 8½ से साँय पौने पाँच तक फैक्ट्री में कार्यस्थल पर साउण्ड सिस्टम पर गाने चलते रहते हैं।

''इस वर्ष मार्च से कम्पनी ***एडिडास, रीबॉक*** आदि का काम भी करने लगी है। फैक्ट्री में दो नई लाइनें दिवाली तक शुरू हो जायेंगी। ग्रुप 4 वर्दियों में क्वालिटी को अनदेखा करो और प्रोडक्शन निकालो वाली बात थी जबकि एडिडास, रीबॉक में क्वालिटी पर जोर...... आर्डर के बाद एडिडास, रीबॉक के बाइंग हाउसों से पहली बार माल चैक करने आये तो बहुत माल फँसा दिया। कम्पनी रिकार्ड में चाहे कुछ भी दिखा दें, महीना-दो महीना ऐसा चला। क्वालिटी के कारण 8 घण्टे में एक लाइन पर 80-100 पीस मुश्किल से निकलते थे। बाइंग हाउस वालों ने इण्डो ब्रिटिश गारमेन्ट्स अफसरों की हालत खराब कर दी। खीझ में साहबों ने 25 मजदूरों से इस्तीफे भी लिखवाये पर बात जस की तस। तब लेन-देन हुआ और माल पास होना शुरू। अब 8 घण्टे में एक लाइन पर 500-550 पीस तैयार। शिफ्ट सुबह 8½ से साँय पौने पाँच की है और रोज पौने सात तक महिला मजदूरों को रोकते हैं, पुरुष मजदूरों को रात पौने एक तक, सुबह 4 बजे तक रोकते हैं। फिनिशिंग में हर रविवार भी काम, प्रोडक्शन में माह में दो रविवार को काम। सिर्फ ग्रुप 4 की वर्दियाँ तैयार होती थी तब ओवर टाइम पर बवाल होता था, महीने में 50 घण्टे से ज्यादा नहीं। अब ओवर टाइम करना ही करना अन्यथा जाओ। काम है तो फैक्ट्री में ही रहो — पुरुष मजदूर सुबह 8½ से अगली सुबह 4 बजे तक काम करें और साढे चार घण्टे बाद, 8½ से फिर काम पर लग जायें। जो छूटे उनका और जो रुके उनका भी साँय पौने सात बजे कार्ड पंच। रात पौने एक, सुबह 4 बजे तक काम का कार्ड पंच नहीं, गेट पर गार्ड लिखते हैं। रात 8 से 9 भोजन अवकाश और रोटी के लिये कम्पनी 40 रुपये देती है। पौने सात के बाद के ओवर टाइम और रविवार को काम को पे-स्लिप में मैनेजमेन्ट नहीं दिखाती, पेमेन्ट बैंक खाते में नहीं भेजती, नकद पैसे देते हैं — दुगुनी दर से देते हैं। रोज सुबह 8½ से रात पौने एक, अगली सुबह 4 बजे तक काम के दौरान साहब लोगों और मजदूरों में कुछ बन्दे अलग-अलग दारू पीते हैं। हाल ही में फैक्ट्री में कैन्टीन में रात डेढ बजे शराब पीने के आरोप में कम्पनी ने 10 मजदूरों को नौकरी से निकाल दिया।'' ■

निमंत्रण

सितम्बर में 28 तारीख वाले रविवार को मिलेंगे। सुबह 10 से देर साँय तक अपनी सुविधा अनुसार आप आ सकते हैं। फरीदाबाद में बाटा चौक से थर्मल पावर हाउस होते हुए रास्ता है। ऑटोपिन झुग्गियाँ पाँच-सात मिनट की पैदल दूरी पर हैं।

Ph. 0129-6567014

E-mail < baatein1@yahoo.co.uk >

- ★ *अपने अनुभव व विचार मजदूर समाचार में छपवा कर चर्चाओं को और बढवाइये। नाम नहीं बताये जाते और अपनी बातें छपवाने के कोई पैसे नहीं लगते।*
- ★ *बाँटने वाले फ्री में यह करते हैं। सड़क पर मजदूर समाचार लेते समय इच्छा हो तो बेझिझक पैसे दें।*
- ★ *महीने में एक बार छापते हैं, 13,000 प्रतियाँ निशुल्क बाँटने का प्रयास करते हैं। चर्चाओं के लिए समय निकालें।*

स्वत्वाधिकारी, प्रकाशक एवं सम्पादक शेर सिंह के लिए रौनिजा प्रिन्टर्स फरीदाबाद से मुद्रित किया। **RN 42233 पोस्टल रजिस्ट्रेशन L/HR/FBD/73/12-14**
सौरभ लेजर टाइपसैटर्स, बी—551 नेहरु ग्राउंड, फरीदाबाद द्वारा टाइपसैट।